# भारतीय संस्कृति और पर्यावरण

(डॉ सरिता)

भारतीय संस्कृति वश्व की प्राची संस्कृतियों में है | इसमें जन्मभू म को स्वर्ग से बढ़कर माना गया है - “जननी जन्मभू मर्चस्वर्गाद प गरीयसी |भारतीय संस्कृति और' पर्यावरण में प्राचीनकाल से ही गहरा संबंध रहा है। हमारे पूर्वजों और ऋ ष मुनियों ने पर्यावरण के महत्व को आदिकाल में ही समझ लया था प्राचीन भारतीय वाड़मय में पर्यावरण और उसके संरक्षण की पर्याप्त चर्चा मलती है। प्राचीन वैदिक साहित्य में पर्यावरण के व भन्न घटकों हि प्रति सम्मानजनक वचार देखने को मलते यहाँ मानव शरीर को पर्यावरण के व वंध धटकों से नि र्मत बतांते हुए इन घटकों के महत्व को प्रद र्शत करने--कां सुन्दर और सराहनीय प्रयास कया गया है । ऐसा सुन्दर प्रयास अन्य संस्कृतियों में देखने को कम ही मलता है । निस्सन्देह यह प्रयास भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संतुलन की दृष्टि से अद् वतीय और उत्कृष्ट है ।हमारे इतिहास दर्शन और संस्कृति का निर्माण 'अण्र्य' में ही हुआ है । महान ऋ ष-मह र्ष, वद्वान, दार्शनिक, तपस्वी अरण्य में ही रहे और अपने क्रयाकलाएं से भारतीय मानस को प्रभा वत कया। भारतीय संस्कृति में पेड़-पौधों तथा जीवों को समु चत सम्मान दिया गया है| देश में प्राचीनकाल से ही मूर्ति पूजा के साथ- साथ पशु पूजा, वृक्ष पूजा तथा पर्यावरण पूजा के अनेक उदाहरण धर्मशास्त्रों, संस्कारों, रढ़ियों, पूजा-स्थलों, शलालेखों, प्राचीन चन्हों और गुफाओं आदि में मलते हैं । प्राचीन ग्रंथों में आम, पीपल, केला, दूब घास, अशोक, तुलसी आदि की पूजा के असंख्य उदाहरण पौजद हैं| भारत में जन्मे चार धर्मों - हिंदू, सख, जैन तथा बौद्ध सभी में बक्षों तथा प्रा णयों की भलाई हेतु अहिंसा का प्रावधान है। बौद्ध धर्म में बरगद को वरोष सम्मान देकर प्म्पूर्ण वनस्पति जगत को सम्मानित कया गया है; क्यों क बुद्ध ने कठोर तपस्या के परचात् बो धवक्ष के नीचे ही ज्ञान प्राप्त कया था | परोपकार की भावना से सक्त गौतम बुद्ध ने वनों के बारे में सदियों पहले वह सब कह दिया था, जो आज की भोगवादी दुनिया के. . वानिकी वद सोच भी नहीं सकते । प्राचीन काल से ही भारतीय ऋ ष-मुनियों ने पर्यावरण संरक्षण के: अनेक उपाय कये हैं| हमारे ऋ षगण पृथ्वी पर प्रकृति को जीवनदायी मानते थे | आज के वैज्ञानिक युग में भी इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता । प्राचीन बैदिक मंत्रों के माध्यम से मनुष्य को यह शक्षा दी गयी है क वह परु- प क्षयों को अपने से हैय न समझे और नदियों, पर्वतों, वृक्षों. व प्रकृति के अवर्णनीय सौन्दर्य में देवी शक्ति का दर्शन करे | निम्न ल खत मंत्र में पृथ्वी को माता के रूप में प्रतिष्ठित कया गया है। भारत में वन्य प्रा णयों की पूजा की परम्परा अनादि काल से चली आ रही है | गाय, मोर, हंस, नाग, सर्प, संह आदि की पूजा इसके उदाहरण हैं | अनेक वन्य प्रा णयों को तो देवताओं का वाहन भी माना गया है, जैसे हंस वद्या की अ धष्ठात्री देबी सरस्वती का वाहन 'माना जाता है। इसी प्रकार चूहा वध्न वनाशक श्रीगणेश का-और उल्लू को महारानी लक्ष्मी-का... वाहन माना गया है। «पंच तत्वों के रूप में हवा, मट्टी, पानी, अग्नि और आकाश की पूजा का प्रावधान पर्यावरण शुद्धता एवं पर्यावरण पूजा के. सुंदर उदाहरण हैं | अथर्ववेद में पीपल के वृक्ष को 'देवसदन' अर्थात् देवताओं का निवास-स्थल कहा गया है | पर्यावरण में, गैसों के सन्तुलन में पीपल और तुलसी की भू मका को अब वनस्पति वैज्ञानिक भी स्वीकार करने लगे. हैं । आधुनिक अनुसंधानों से यह ज्ञात हुआ है क तुलसी और पीपल के वृक्षों से अ धक मात्रा में ऑक्सीजन निकलती है, जो पर्यावरण को स्वच्छ एवं जीवंत बनाये रखती है । वक्षों के प्रति सम्मानजक व्यवहार करने का उपदेश 'इबेताइवेतर' उपनिषद में मलता है | प्राचीन मरनी षयों ने पर्यावरण सन्तुलन के सशकवत माध्यम के रूप में

वक्षारोपण के प्रचार-प्रसार के लये अनेक उपाय कये हैं। प्राचीन मारतीय ग्रंथों में वक्ष की काटने वाले को अपराधी और पातकी माना गया है | महाभारत में तो पेड़ की प त्तयों तक को... तोड़ने की मनाही है। वष्णु-धर्मसूत्र, स्कंदपुण ._ और याज्ञवल्व्य-स्मृति में भी वक्ष काथ्ने को... अपतगध बतलाया गया है.। जनश्रुति तथा लोक वद्वास में वृक्षों को अपार स्नेह व. श्रद्धांभाव से देखा जाता है | कुछ वक्ष देवी- देवताओं के साथ जुड़े हैं । कृष्ण का नाम आते .. .. ही कदम्ब को कौन भुला सकता है ) अशोक को कामदेव का वृक्ष माना जाता है, कमल ब्रह्मा और वष्णु का पुष्प है। लक्ष्मी को कचनार के पूल प्रय होते हैं| बेल-पत्र शव पर चढ़ाया जाता है और पीपल के पेड़ पर यक्ष का वास माना जाता है। ... भारतीय संस्कृति में गंगा-जम्रुना आदि नदियों को पतित पावनी कहा गया है। कोई भी उत्सव, संस्कार और धा र्मक कार्य तब तक सफल नहीं समझा जाता, जब तक उसमें कममीर का केशर, हरिद्वार का गंगाजल, कर्नाटक का चंदन और स्थानीय आम के पत्ते एकत्र नहीं हो जाते । कंतु हाल ही के सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ है क वाराणसी में गंगा प्रवास में अनेक स्थलों में वशेषत: अस्सी घाट और हरिदचनन्द्र घाट पर प्रदूषण सर्वा धक मात्रा में है। कल कारखानों से निकलने वाले कूड़े-कच से एक ओर तो गंगा की शु चता नष्ट हो रही है, दूसरी और जलजीव मरते जा रहे हैं। साथ ही वायु प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है । भारतीय संस्कृति का मूत मंत्र है । वेद ज्ञान के कोष हैं । वे कहते हैं क प्रत्येक वस्तु का त्याग करके उपभोग कला चाहिये। 'त्रेन त्यक्तेन भुंजीथा' का अर्थ भयही है। ऐसी स्वार्थ-त्याग वाली और शोषण वरोधी भारतीय संस्कृति ही मानव के अपनी के योग्य है और यह संस्कृति ही यज्ञमय जीव" जीने का उपदेश देती है । देव यज्ञ, भूत के ऋ ष यज्ञ, अति थ यज्ञ और पतृ यज्ञ की से न केवल वायु ग़द् ध होती है, आत्मिक सुख भी मलता है | पर्यावरण का कुछ प्रदूषण तो प्राकृतिक कारणों से भी होता | है। उदाहरण के लये ज्वालामुखी फटने, भूकंप आने और दावानल आदि से भी पर्यावरण को काफी हानि पहुंचती है | कंतु अब यह सद्ध हो चुका है क पर्यावरण का व्यापक प्रदूषण प्रनुध्य की गलत नीतियों का ही परिणाम है। यदि मनुष्य ने अपनी इस गलत नीति पर सूक्ष्ता से वचार- वमर्श न कया, तो धीरे- धीरे रेत पर बनाये निशान की भाँति मनुष्य का निशान भी संसार मे मट जायेगा । आज मनुष्य के चेहरे से खुशी गायब होती जा रही है। आधुनिक वकास ने भोगवादी संस्कृति को पनपाया है, उसे ही बलशाली बनाया है। इसी भोगवादी संस्कृति ने प्रकृति को अपना बत्रु मान लया है। मनुष्य प्रकृति का स्वामी बन बैग है और प्रौद्यो गकी का जो जाल फैलाया है, उसमें प्रकृति का शोषण प्रमुख लक्ष्य है। यह परद् चम की रेष्टि है | ठीक इसके वपरीत भारतीय इष्टि प्रकृति के शोषण की न होकर उसके संरक्षण समतोल और श्रद्धा की रही है। प्रकृति पर वजय पाने की कामना तो पावचात्य संस्कृति की रही है। भारतीय वृष्टि में या भारतीय संस्कृति में मनुष्य प्रकृति का स्वामी नहीं, उसकी संतान है। जिसकी कोख में पलकर वह बड़ा हुआ है। प्रकृति के साथ भारतीय जन का यही पारम्परिक रिहता मारत की 'अर्य संस्कृति' है | यही 'अरण्य संस्कृति' आज के आधुनिक समाज में 'पर्यावरण की संस्कृति' के रूप में हमारे सामने है। ले कन इसे देखने समझने की दृष्टि में आज भारी भूल हो रही हैं। आधुनिक वकास का प्रतीक बनकर आयी औद्यो गक क्रान्ति ने कुछ लोगों को तो सु वधाभोगी बना दिया है; कंतु सारे संसार के पर्यावरण को प्रदू षत कर दिया है | फर भी इस अति-उपभोगी संस्कृति पर आधारित आधुनिक सभ्यता से मनुष्य इतना सम्मोहित है क इसके बिना रहने की वह कंल्पना भी नहीं कर सकता; परिस्थिति से मुक्त होने के लये वह छटपयांता भले ही रहें।

पय वर्ण-संरक्षण-के लये जनचेतना की सख्त जरूरत है-। हमें नंष्ठ हो रही प्राकृतिक सम्पदा और नैस र्गक सौन्दर्य को फर से जी वत रखना होगा। इसी से समाज, देश और पूर्ण व्व की मलाई है | चूँ क यह

हमारे जीवन और अस्तित्व का मामला है, तथा प इसका तिरस्कार नहीं कया जा सकता | आवश्यकता इस बात की है क प्राचीनकालीन पा ऋ षयों की वाणी को अमल में लाया जाये और स्वयं में यह ववेक जागृत करना जरूरी है क जिस प्रकार वक्ष स्वयं फल नहीं खाते, नदिया अपना जल स्वयं नहीं पीती अथवा बैल, घोड़े, भेड़-बकरी, हिरण आदि पशु केवल अपने लये नहीं जीते, हमारा उपकार करते हैं; उसी प्रकार हमको भी अपने आसपास के पर्यावरण के लये जीना है | स्वयं को सबका सहचरं समझना है। यही धर्म और आस्तिकता है। जीवन को नष्ट करना बहुत बड़ा द्रोह है| हमारे देश के मनीषी न जाने कब से “आत्मवत् सर्वमूतेषु' अपने समान सबको समझो - की बात करते रहे हैं । यहां वाल्मी क के कंठ से क्रौंच-बध की पीड़ा कान्य में फूटी थी। यहां वनों में रहकर ऋ षयों ने चन्तन कया थो और आएयक ग्रंथ 'ेखे थे। यहाँ गौतम की कुरंणां और महावीर. की 'अंहिंसा परमो धर्म:! की वाणी निस्सत हुई थी। क्या.नयी सभ्यता और वकास के नाम पर मानव और प्रकृति के परोने आज भुलाये जाने योग्य हैं|